निष्काम कर्म

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

निष्काम कर्म का तात्पर्य है ऐसा कर्म जिसे बिना किसी लालसा, बिना किसी कामना और फल की इच्छा किये बिना किया जाये। ऐसा कर्म निष्काम कर्म कहलाता है। कामना पूर्वक किया गया कर्म बंधन का कारण होता है। फल की इच्छा का त्याग कर जो कर्म किया जाता है वह बंधन का कारण नहीं होता, क्योंकि यह कर्म आसक्त रहित है। भारतीय संस्कृति में निष्काम कर्म को बहुत महत्व प्रदान किया गया है। श्रीमद्‌भगवत्‌गीता का मूल सार ही निष्काम कर्म योग है। गीता के प्रथम छः अध्यायों में कर्ममार्ग का वर्णन है। कर्ममार्ग का तात्पर्य है जीवन में कर्म करो, किन्तु कर्मफल की इच्छा मत करो। कर्मफल की इच्छा करने से यदि मनोनुकूल फल की प्राप्ति नहीं होती तो प्राणी को दुःख होता हैं इसलिए फल का त्याग करके कर्म करना चाहिए। जीवन में निराशा का भाव नहीं लाना चाहिए। चारों आश्रमों, पुरुषार्थ चतुष्टय इत्यादि में कर्म करने की ही प्रेरणा दी गई है।

हे मानव ! तुम कर्मयोगी बनो। बिना कर्म किये मानव का जीवन निष्क्रिय हो जाता है। वह समाज पर भारभूत हो जाता है, इसलिए सदैव कर्म करते रहना चाहिए। दूसरा महत्वपूर्ण संदेश भक्ति मार्ग का है। भक्तिमार्ग का तात्पर्य है– श्रद्धापूर्वक ईश्वर में विश्वास करना। ईश्वरार्पण बुद्धि से किया गया कार्य अहंकार को समाप्त कर देता है। इसलिए जो भी कार्य किया जाये वह कर्ता बुद्धि से नहीं बल्कि ईश्वर को समर्पित करके किया जाता है। गीता में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति मुझको सर्वत्र और सभी प्राणियों में मुझको देखता है वह मेरे लिए नहीं मरता और मैं भी उसकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहता हूं। यह सम्पूर्ण संसार धागे में मनके की भांति मुझमें पिरोया हुआ है। सभी जीव मेरे अंश है और मैं सभी में हूं। यही गीता का भक्तिमार्ग है। तीसरा महत्वपूर्ण संदेश ज्ञानमार्ग का है। ज्ञान से तात्पर्य सम्यक् ज्ञान से है। गीता कहती है कि बिना ज्ञान के मोक्ष की प्राप्ति संभव नहीं। अज्ञानी व्यक्ति संसार में भटकता रहता है। सत्य का स्वरूप उसे दिखलायी नहीं देता। सत्यज्ञान प्राप्त करने के लिए शास्त्रों का अध्ययन, गुरु का सान्निध्य आवश्यक है। गुरु ही अज्ञान के अंधकार को दूर कर ज्ञान का

प्रकाश फैलाता है। जिससे प्राणी में ज्ञान का बीज अंकुरित होता है। इस प्रकार कर्मभक्ति और ज्ञान गीता के मूलमंत्र है। गीता सर्वेश्वरवाद का उपदेश देती है। सर्वेश्वरवाद का अर्थ है सृष्टि के कण–कण में ईश्वर की सत्ता है। सृष्टि का कोई भी स्थान ऐसा नहीं है जहां ईश्वर की सत्ता न हो। ईश्वर सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में व्याप्त है। सगुण रूप में मूर्तिपूजा का विधान किया गया है और निर्गुण रूप में ईश्वर सभी विशेषणों से परे, इन्द्रियों से परे केवल ज्ञानचक्षु के द्वारा चिंतनीय है। गीता में प्रवृत्ति और निवृत्ति का भी उपदेश दिया गया है। प्रवृत्तिमार्ग गृहस्थ मार्ग है और निवृत्तिमार्ग संन्यास मार्ग है। प्रवृत्तिमार्ग में गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए मोक्ष की प्राप्ति संभव हो सकती है यह बतलाया गया है। निवृत्तिमार्ग संसार त्याग का मार्ग है। इसके द्वारा भी मुक्ति प्राप्त की जाती है किन्तु यह मार्ग कठिन मार्ग है। गीता विश्व प्रतिष्ठित ग्रंथ है। यह ग्रंथ हिंदू धर्म के लिए पूजनीय है। इसकी सर्वमान्यता के कारण ही विश्व की अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। न्यायालयों में गीता के ऊपर हाथ रखकर ही न्यायाधीश के समक्ष शपथ दिलायी जाती है। महाभारत के युद्ध के समय जब अर्जुन का रथ युद्ध क्षेत्र में आया तो अपने सगे–संबंधियों को देखकर अर्जुन को मोह उत्पन्न हो गया। उनके मोह को दूर करने के लिए भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निष्काम कर्म का उपदेश दिया है। महाभारत का युद्ध अठारह दिन चला था। इसलिए गीता में अठारह ही अध्याय हैं। गीता का उपदेश सार्वभौमिक उपदेश है। भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में यह सत्य है। इसमें कर्त्तव्यबोध, व्यवहारबोध, संबंधबोध, आत्मबोध, निष्काम कर्म, ज्ञान और भक्ति का संदेश, जीवन–मरण की सत्यता योग और पर्यावरण जैसे अनेक विषयों का संदेश दिया गया है। जो व्यक्ति गीता के संदेश को अपने जीवन में उतार लेता है वह पूर्ण काम हो जाता है। गीता में जिस आचार की शिक्षा दी गयी है, उसे वर्णाश्रम सिद्धान्तों के आधार पर विभाजित किया गया है। वर्तमान समय में वर्णाश्रम व्यवस्था अत्यन्त विकृत होकर प्रायः टूट चुकी है, और इस समय जो लोग अपने को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहते हैं, या ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास आदि आश्रमों का नाम लेते हैं, उसका कोई विशेष महत्व नहीं है। गीता में जो चारों वर्णों और आश्रमों का विभाजन किया गया है और उनके जो कर्त्तव्य कर्म बतलाये गये हैं, उसका एकमात्र लक्ष्य सामाजिक सुव्यवस्था और व्यक्ति की

शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक क्षमता का क्रमशः विकास ही है। उसमें प्रत्येक व्यक्ति और समुदाय को उसकी प्रवृत्ति, योग्यता और क्षमता के अनुसार ही काम करने की प्रेरणा दी गयी है। समस्त कर्मों का अन्तिम उद्देश्य आत्मा का उत्थान और उद्धार ही माना गया है। आत्मा समस्त कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय तथा उनके विषय, मन, अहंकार, बुद्धि आदि से भी परे है। यह समस्त प्रकृति एक क्षेत्र है और आत्मा क्षेत्रज्ञ है। आत्मा के बन्धन मुक्त होने के लिये शास्त्रों में संन्यास और योग के मार्गों का निरूपण किया गया है। पर जो गृहस्थ गीता में प्रदर्शित दान, अतिथि सत्कार, नित्य, नैमित्तिक आदि कर्त्तव्यों को हार्दिक भाव से पूरा करता है और सत्य आचरण पर दृढ़ रहता है, वह भी निस्सन्देह मुक्ति का अधिकारी होता है।